वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २५ अप्रैल - २०२५ प्रकाशन - ०४

सम्पादिका :
स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती
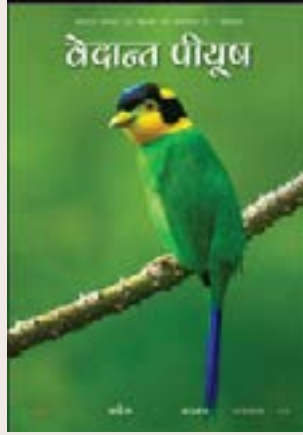
प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

1,	प्रकाशक पृष्ठ	02
2.	श्लोक	05
3.	पू. गुरुजी का संदेश	06
4.	वाक्यवृत्ति	12
5.	गीता और मानवजीवन	18
6.	जीवन्मुक्त	22
7.	श्री कौशल्या चरित्र	25
8.	कथा	29
9.	आश्रम-मिशन समाचार	32
10.	आगामी कार्यक्रम	45
11.	इण्टरनेट समाचार	47
12.	लिन्क	48

अप्रैल 2025

स्थाणौ पुरुषवद्भ्रान्त्या कृता ब्रह्मणि जीवता।
जीवस्य तात्विके रूपे तस्मिन् दृष्टे निवर्तते।।

अन्धकार के कारण जैसे खम्भे में भूत दिखने लगता है, वैसे ही अज्ञान के कारण ब्रह्म भी जीव की तरह प्रतीत होता है। जीव का तात्त्विक रूप जान लेने पर उसका जीव भाव समाप्त हो जाता है।

सन्देश
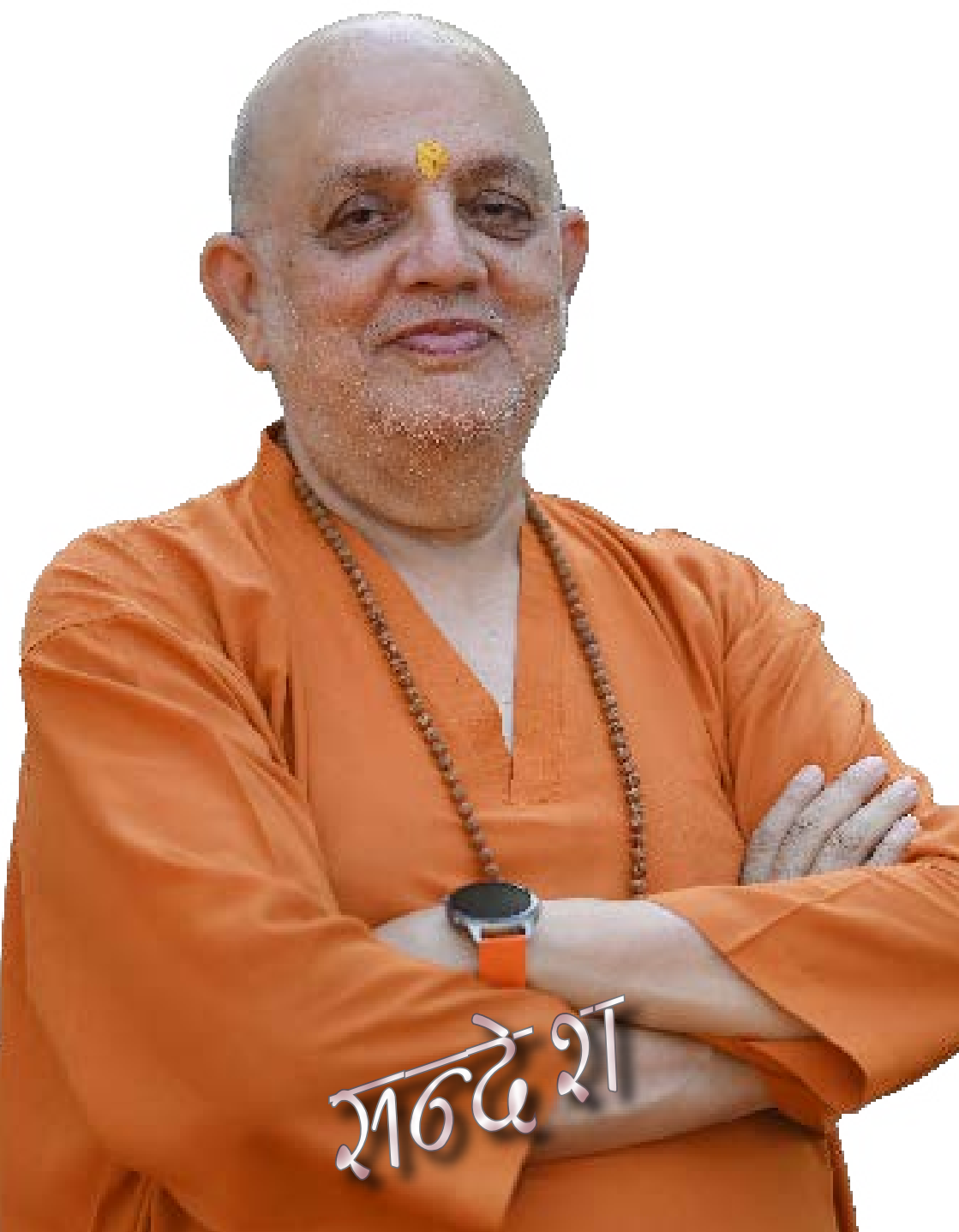
योग और धर्म

योग अर्थात् समत्वम्

गीता जीवन के उतार चडावों में समभाव बनाए रखने की क्षमता को योग के रूप में परिभाषित करती है। 'समत्वं योग उच्यते' चाहे स्थिति सौहार्दपूर्ण हो या असहज, गीता में परिभाषित योगी को किसी भी भावनात्मक उत्साह या निराशा का अनुभव नहीं होता है, भले ही वह व्यक्ति परिस्थिति के प्रति पूरी तरह से संवेदनशील हो। यह स्पष्ट रूप से एक महान गुण है। सब से पहले, ऐसे व्यक्ति के लिए कोई झटका, चिन्ता, अवसाद आदि नहीं होते हैं। कोई डर नहीं होता, योगी के लिए संसार कभी समस्या नहीं होता। उसने मानो खुद को उन सभी सम्भावित समस्याओं से अलग कर लिया है जो संसार कभी दे सकता है। दूसरा, ये वे लोग है जो हर स्थिति से लगातार सीखते हैं। अन्य लोग अपनी उर्जा को निराधार और अन्तहीन प्रतिक्रियाओं में बर्बाद करते हैं, और इसलिए सीखने का अवसर चूक जाते हैं। भगवान कहते हैं कि जो कोई भी किसी भी परिस्थिति या स्वयं

की सच्चाई जानना चाहता है, उसे पहले 'योग' की यह क्षमता होनी चाहिए। वे कहते हैं कि योगी के लिए ब्रह्मज्ञान एक आसान कार्य है और गैर योगी के लिए यह कभी भी सम्भव नहीं है।

अर्जुन – आत्मज्ञान के लिए तैयार नहीं:

यह आश्चर्य नहीं है कि श्रीकृष्ण ने अर्जुन, जो एक धर्मात्मा था, फिर भी उन्हें आत्म-ज्ञान के लिए पात्र नहीं माना। उसी क्षण अर्जुन विजय, राज्य या ऐसी किसी भी चीज में पूरी तरह से उदासीन हो गया क्योंकि विजय में अपने ही प्रियजनों और सम्बन्धियों को मारना शामिल था। इस सम्मानीय लोगों को खोने के विचारमात्र से ही उसके शरीर में कम्पकम्पी दोड़ गई। बाहरी परिस्थितियों ने उसे बुरी तरह हिला दिया। वह एक आदर्श योगी के बिलकुल विपरीत था। योग नहीं तो ब्रह्मविद्या नहीं। इसलिए भगवान ने अर्जुन को सलाह दी कि पहले किसी भी स्थिति को बिना किसी भावनात्मक उथल-पुथल के देखने की क्षमता विकसित करों। पहले अध्याय में अर्जुन का वर्णन इस मूलभूत आवश्यकता के बिलकुल विपरीत दृश्य था।

सुख और दुःख

यदि मूलरूप से सब कुछ केवल ब्रह्म ही है, तो किसी भी स्थिति से किसी को, कहीं भी दुःख कैसे हो सकता है? यदि दुःख आता है तो या तो यह कथन कि सबकुछ दिव्य है, मूलरूप से गलत है, या हमारे

योग और धर्म

दुःख निराधार और काल्पनिक हैं। खुशी को समझना शिक्षा का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण हिस्सा होना चाहिए। यह हमारे अस्तित्व के लिए इतना मौलिक है, लेकिन दुर्भाग्य से कोई भी शैक्षणिक संस्थान हमें खुशी का रहस्य नहीं बताता है। क्या हम दुनिया में किसी भी ऐसी चीज को इंगित कर सकते हैं जो निश्चित रूप से किसी को भी दुःख दे सके? नहीं, यह सब इतना सापेक्ष है। हमारी बिमारियां हमें दर्द देती हैं, लेकिन हम जानते हैं कि दर्द हमारे शरीर द्वारा हमारे शरीर के किसी विशेष हिस्से पर विशेष ध्यान देने का विनम्र अनुरोध है।

कोई भी चीज जो हमारी पसंद के अनुसार होती है, हमें खुशी देती है। व्यक्तिगत सौहार्द आनन्द है। यहां तक कि हमारे अपने प्रियजन भी एक ही भोजन की टेबल पर बैठकर एक ही व्यंजन पर अलग अलग प्रतिक्रिया दर्शाते हैं। प्रतिक्रियाएं वाह से लेकर ओह-नो तक भिन्न होती हैं। एक ही चीज अलग अलग भावनाओं को जगाती हैं, क्योंकि पसंद और नापसंद अलग-अलग होती हैं। यदि हम इस तथ्य को 'देख ले' तो हम आत्मविश्वास से कह सकते हैं कि दुनिया में ऐसा कुछ भी नहीं है जो सार्वभौमिक रूप से खुशी या दुःख देता हो। वास्तव में दुनिया जड़ पदार्थो से बनी है जो हमें कभी भी खुशी या गम देने में सक्षम नहीं है।

योग और धर्म

जीवन का मजेदार खेल

जीवन सचमुच एक अजीब खेल है। हम पहले किसी चीज को सुख या दुःख का स्रोत मान लेते हैं और फिर उसके पीछे भागते हैं। हमारी आकांक्षाएं, सपने और इच्छाएं अक्सर इन कल्पनाओं और अनुमानों पर आधारित होती हैं। हम सत्य का नहीं बल्कि अपनी कल्पनाओं का अनुसरण करते हैं। हम अपनी काल्पनिक और निराधार पसंद-नापसंद के अनुसार स्थितियों पर प्रतिक्रिया करते हैं। जब अधिकांश लोग कुछ सामान्य 'पसंद' साझा करते हैं तो वह ही सत्य लगने लगता है। एक योगी के लिए पसंद और नापसंद पर आधारित जीवन और प्रतिक्रियाएं समाप्त हो जाती हैं। बस एक योगी के दृष्टिकोण से दुनिया की कल्पना करें। हर चीज में अपनी सुन्दरता और विशिष्टता है, लेकिन कुछ भी कभी विशेष खुशी और गम नहीं लाता। चीजें बस वैसी ही हैं, जैसी वे हैं। ईश्वर ने प्रकृति बनाई है, जहां हर छोटा कण भी समष्टि की व्यवस्था और अस्तित्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

धर्म

जब पसंद और नापसंद का बोलबाला होता है, तो बाहरी दुनिया के प्रति प्रतिक्रियाएं निश्चित रूप से हमारी व्यक्तिगत सनक और कल्पनाओं के अनुसार होती हैं कि हमें क्या खुशी और दुःख देता है, हालांकि, एक योगी के मामले में जब वह स्पष्ट रूप से देखता है कि कुछ भी कभी खुशी या दुःख

नहीं देता है, तो हमारे मन में एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न आता है। एक योगी कैसे प्रतिकिया करता है? यदि सब कुछ एक ही तत्त्व है, तो विभिन्न स्थितियां पर अलग अलग प्रतिक्रियाएं कैसे होती हैं? यहीं पर धर्म की भूमिका दिखाई देती है। जिस तरह हम अपने दैनंदिन जीवन में अपनी पसंद-नापसंद के अनुसार स्थितियों पर प्रतिक्रिया कर सकते हैं, या हम अपनी व्यक्तिगत पसंद-नापसंद अनुसार नहीं बल्कि तथ्यों के अनुसार प्रतिक्रिया कर सकते हैं। हम अपनी सनक और कल्पनाओं से प्रेरित समाज में जी सकते हैं या उसका पालन कर सकते हैं, जो सभी के लिए सही है। यह जीवन जो तथ्यों पर आधारित है, सार्वभौमिक धार्मिकता पर आधारित है - धर्म का जीवन कहलाता है। प्रत्येक देश की आचार संहिता, उसके कानून और संविधान होते हैं। कोई भी अपनी पसंद का कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। यही एक योगी और एक अज्ञानी व्यक्ति के जीवन के बीच का अन्तर है। योगी अन्दर शान्त है और बाहर धर्म के अनुरूप जीता है। योग और धर्म हमेशा साथ साथ चलते हैं। एक-दूसरे के बिना सम्भव नहीं है।

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्व परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्याङ्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

अगमन्मे मनोऽन्यत्र
साम्प्रतं च स्थिरीकृतम्।
एवं यो वेद धी वृत्तिं
सोऽहमित्यवधारय॥

हमारा मन कहीं और चला गया था, और अब यहां स्थिर हुआ है, इस प्रकार जो अपनी बुद्धि की वृत्ति को जानता है, वह मैं हूं – ऐसा तुम निश्चय करो।

वाक्यवृत्ति

पूर्व श्लोक से आचार्य ने बताया कि 'हम वह चेतन तत्व है, जिसकी सन्निधि में यह देह, प्राणादि उपाधियां जड़ होने के बावजूद भी चेतनवान प्रतीत होती है। जिस प्रकार जल शीतल होते हुए भी अग्नि की सन्निधि से वह गरम हो जाता है। उसे हटा देने पर पुनः शीतलता को प्राप्त करता हैं।

आचार्य यहां हमारी ही अनुभूतियों का विश्लेषण करके उस चेतनतत्त्व के प्रति और स्पष्टतः हमारा ध्यान इंगित करते हैं। सामान्यतः इस स्थूल शरीर को प्रत्यक्ष रूप से विषयीकृत करते हुए उसे अपने से पृथक् देख सकते है और उसके बारे में 'हम यह देह नहीं है' इस प्रकार से निश्चय कर सकते है। मन सूक्ष्म पंचमहाभूतों से निर्मित होने के कारण देह की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म होता है। अतः देह की तरह विषयीकृत करके मन से पृथक् हम है, यह देख पाना इतना आसान नहीं लगता। मन वृत्तियों के प्रवाह को बोलते हैं। उसमें विविध बाह्य विषयक तथा

वाक्यवृत्ति

भावनात्मक सुख-दुःख, शान्ति-अशान्ति, संतोष-असंतोष आदि विविध अनुभूतियां होती है। यह वृत्तियां हमें इतनी अपरोक्ष अनुभव होती है कि उसके आने पर हम यही मान लेते है कि हम ही सुखी-दुःखी आदि है। हम अपनी अनुभूतियों पर अत्यन्त विश्वास करते हैं। अतः आचार्य हमें अपने ही अनुभव के माध्यम से बता रहे हैं।

कई बार किसी व्यवहार करते समय अपने मन को विचलित देखते है कि मन उस समय वहां उपलब्ध नहीं है। जब कोई हमसे बात कर रहा हो, तब अक्सर ऐसा होता है कि उनकी पूरी बात हम सुन नहीं पाएं। उसका कारण भी जानते हैं कि उस समय हमारा मन कहीं और चला गया था। मन का ऐसे आने-जाने के स्वभाव को हम अच्छी तरह जानते हैं। अतः आचार्य बताते हैं कि अगमन्मे मनो अन्यत्र... हमारा मन कहीं और चला गया था, इस वजह से हम बात सुन नहीं पाए। अब उसे

दोहराएं क्योंकि साम्प्रतं च स्थिरीकृतम्। अब पुनः वापिस यहां लौट आया है और इस समय यहां वर्तमान में, इसी स्थान में उपलब्ध है अर्थात् मन को हम यहां-वहां, भूत-भविष्य में आवागमन करता हुआ अनुभव करते है। उसे यहां है या कहीं और है यह जानते है।

यह पहले ही सिद्ध हो चुका है कि घट दृष्टा घटाद् भिन्नः। जो जिसे जानता है, उससे वह पृथक् होता है। 'एवं यो वेत्ति धी-वृत्तिम्' अपने मन की इन समस्त वृत्तियों को हम जानते है। 'सोऽहं इति अवधारय।' हम इन समस्त बुद्धिवृत्तियों को जाननेवाले, उसके साक्षी, तटस्थ दृष्टा है। जो मन के भावनात्मक परिवर्तन, विकारादि का भी साक्षी होने से उससे असंग, अविकारी है। ऐसा अपनी साक्षीस्वरूपता के बारे में निश्चय करें।

"Rise ABOVE THE STORM
and you will
find the SUNSHINE!"
~ Mario Fernandez

गीता और मानवजीवन
पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी
-: २४ :-
दान

गीता और मानवजीवन

दान के विषय में गीता में भगवान कहते हैं;

'दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।

दान करना चाहिए, और इस प्रकार से करना चाहिए कि जिनको दान दिया है, उनसे कोइ प्रति-उपकार की अपेक्षा न हो। 'इस समय मैं दान कर रहा हूं, इसलिए भविष्य में मुझे कुछ प्राप्त होगा।' ऐसी वृत्ति दान की पीछे नहीं होनी चाहिए। कई बार कोई दान देता है, तो उसके साथ ही यह शर्त रखता है कि 'हमारे नाम की तक्ती लगाओ।'

इसलिए भगवान कहते है कि,

'यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।

दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम्।।

यह राजस दान है, जिसमें प्रत्युपकार की भावना हो, कि हमें कुछ फल प्राप्त हो-ऐसी अपेक्षा हो अथवा भारी मन से दीया जाय। दान देकर उसके उपर कोई उपकार कर रहे हैं, ऐसी भावना नहीं होनी चाहिए।

बल्कि दान करते समय ऐसी भावना रखनी चाहिए कि हमारे

उपर उपकार हो रहा है। ऐसा जगत में कौन है, जो अपना हाथ नीचे करे और दान देनेवाले का हाथ अपने से उपर बताए? मनुष्य को ऐसा करना पसंद नहीं है। फिर भी जब कोई दान देता है तब ऐसा अवसर हमें प्रदान करके हमारे पर उपकार कर रहा है, ऐसी भावना मन में आनी चाहिए। ऐसी भावना से किया हुआ दान श्रेष्ठ दान है, जिससे दान लेने वाले को ऐसा लगे ही नहीं कि उन पर किसी तरह से उपकार किया जा रहा है।

कई लोग देश-काल की, पात्र-अपात्र की भी चिन्ता किए बगैर और अनादरपूर्वक दान देते है। भगवान बताते हैं कि इस प्रकार का दान तामस दान है। पवित्र तीर्थभूमि में, संक्रान्ति आदि विशेष काल में, आदरपूर्वक योग्य व्यक्ति को दान देना चाहिए। उसके बजाय अपवित्र भूमि में, चोर, मूर्ख व्यक्ति आदि को दान देना, व्यक्ति का सत्कार किए बगैर देना यह उचित नहीं है। ऐसा करने से दान देनेवाले और दान लेनेवाले दोनों में से किसी का भी कल्याण नहीं होता। बाहर से ऐसा शायद लगे कि दोनों का कोई भौतिक हेतु सिद्ध होता है किन्तु अन्ततः वह हितकर नहीं होता है।

अन्य की सेवा करने में भी यही भावना रखनी चाहिए। सेवा करके जताना नहीं चाहिए कि 'देखो, मैंने इतना-इतना किया।' सेवा लेनेवाले को इस तरह सतत याद दिलाते रहना यह योग्य नहीं है। सेवा इस तरह करनी चाहिए कि जिससे सेवा लेनेवाले को ऐसा लगे ही नहीं कि उन पर कोई उपकार होता है। इससे विपरीत सेवा करनेवाले को ऐसा लगना चाहिए कि, 'मुझे सेवा करने का अवसर प्रदान करके उसने मुझ पर उपकार किया है।'

— ५८ —
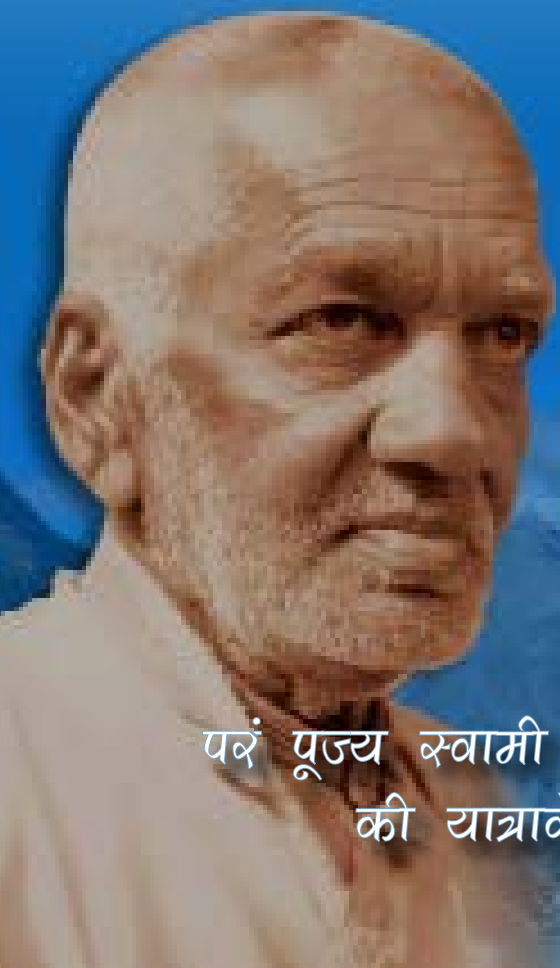
बदरीनाथ

परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण
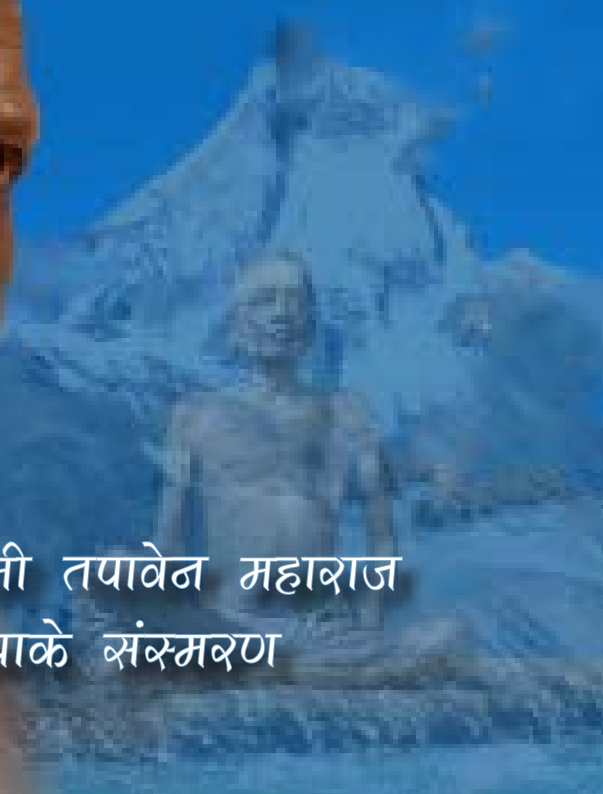
जीवन्मुक्त

बदरीनाथ का मंदिर अलकनंदा के दक्षिण किनारे पर है। इसके अंदर बदरीनारायण की सन्निधि में पहुंच कर, उस मंजुल दिव्य के दर्शन करते ही, भक्ति में लीन हो जाता है। बदरीनाथ की मूर्ति विविध भूषणों से विभूषित है। कई रंगो की कमनीय कुसुम मालाओं से अलंकृत दैदीप्यमान है। उसके देखते ही मन उसकी ओर आकृष्ट हो जाता है। बदरीनाथ के मंदिर में मैने जब एक केरलीय नंबूद्रि को मुख्य पुजारी के पद से देवताराधना करते देखा तो मुझे केरलीय की आंखो के आगे गुरुवायूर-गुरुपवनपुर आदि केरल के मंदिर का दृश्य नाच उठा, और मेरा मन अभिमान और आनन्द से पुलकित हो उठा। इसी मंदिर के पुजारीजी को 'रावलजी' कहा जाता है। मैं इन्हीं पुजारीजी के साथ बदरीनाथ की पूजा के विषय में, केरल के साथ इस प्रकार की पूजा के चिरन्तन संबध के विषय में, तथा बदरीनाथ के इतिहास के विषय में कभी कभी चर्चा किया करता था। एक केरलीय होने के कारण वस्तुतः मैं बडे गर्व के

साथ श्री शंकरपादों की महामहिमा का वर्णन किया करता था। यह प्रसिद्ध है कि बदरिकाश्रम में नारायण-गिरि के नितंब देश पर श्री शकराचार्यजी ने ही श्रीनारायण मूर्ति की स्थापना की थी। किन्तु यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि शंकर का सुजातीय एक नंपूतिरी कब से बदरीनाथ में पूजा करने लगा था। अहो! शंकर का चरित्र कितना अलौकिक तथा अद्भूत है। श्री शंकर की विचारणा शक्ति तथा कर्म कुशलता अतुलनीय थी। इस संसार में उनके समान एक सर्वतन्त्र स्वतंत्र, अलौकिक क्षमता सम्पन्न, दार्शनिक, धुरंधर तथा महोद्यमी, कर्मवीर, धर्म योद्धा बहुत कम अवतार लेते है। जब हम देखते है कि उन्होंने अपनी अल्प आयु में कई प्रौढतर ग्रंथों की रचना की, अनेक गुरुगम्भीर धार्मिक कृत्य किये, तो ऐसा आभास होने लगता है कि वह शंकर तो साक्षात् शंकर के अवतार थे। किन्तु खेद तो इस बात का है कि इतने बडे महात्मा, सनातन धर्म के उद्धारक और जगद्गुरु श्री शंकर की महिमा को तथा उसके जीवनवृत्त को भारतवर्ष के अधिकतर लोग भलीभांति नहीं जानते। वस्तुतः इसके लिए हम भारतीयजनों की अपेक्षा वर्तमान शिक्षाक्रम ही अधिक उत्तरदायी है। मातृभूमि के महान् पूर्वपुरुषों के शोभायमान जीवनचरित्र को समझने और उनके पुण्यमय जीवन को आदर्श बनाने में जो शिक्षा प्रोत्साहन नहीं देती, वह यथार्थ शिक्षा नहीं हो सकती।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)
श्री कौशल्या चरित्र
– १० –
प्रनवउं परिजन सहित विदेहू।
जाहि राम पद गूढ सनेहू।।

श्री कौशल्या चरित्र

श्री भरत शपथों के माध्यम से मां को आश्वस्त करने का प्रयास करते हैं कि इस घटनाक्रम में उनका कहीं कोई हाथ नहीं है। सत्य तो यह है कि मां को आश्वस्त करने के लिए शपथ की कोई आवश्यकता न थी। यह शपथ तो वे स्वयं को संतोष देने के लिए ही उठाते हैं। उन्होंने संशयग्रस्त नागरिकों की बींधती हुई दृष्टि का अनुभव किया। 'जिस प्रकार की अनर्थमयी घटनाएं हुई हैं उसमें उनका कोई हाथ नहीं है।'' भरत को लगता है कि इस प्रकार का विश्वास कर पाना किसी के लिए सम्भव न होगा। फिर जिस वात्सल्यमयी मां को प्राणप्रिय पुत्र का विछोह सहना पड़ा हो तथा पतिविहीनता होने का दुर्भाग्य भोगना पड़ा हो–उनका विश्वास मेरे उपर कैसे हो सकता है? किन्तु भरत जैसा सन्त भी जिस अगाध हृदय की गहराईयों को पूरी तरह नाप नहीं सका वह महिमामयी मां कौशल्या अम्बा ही हैं।

भले ही महारानी कैकेयी ने उनके पुत्र को अयोध्या से दूर वन में भेजने का प्रयास किया हो, किन्तु अपनी गरिमा के अनुरूप उन्होंने अयोध्या की राज्यसभा में भरत से आग्रह भरे शब्दों में राज्य स्वीकार करने के प्रस्ताव का समर्थन किया। प्रस्ताव के समर्थन में

दी गई उनकी युक्ति बड़ी मार्मिक थी। गुरु के द्वारा रखा गया प्रस्ताव शुद्ध धर्म की धारणा पर आधारित था। वे उन्हें शुद्ध कर्तव्य की प्रेरणा दे रहे थे। मां के समर्थन में उन्हें भरत की भावनाओं का पूरा ध्यान है। यदि श्री भरत गुरुदेव का प्रस्ताव स्वीकार कर लें तो उसकी बहिरंग प्रतीति ऐसी होगी कि जैसे उनकी आकांक्षा को धर्म का समर्थन प्राप्त हो गया है। अनेक लोगों को यह भ्रान्ति हो सकती थी। किन्तु कौशल्या अम्बा गुरु के वचनों को वैद्य द्वारा बताए गए पथ्य के रूप में प्रस्तुत करती हैं। पथ्य में रोगी का आकर्षण न होना स्वाभावकि ही है। फिर भी स्वास्थ्य के हित में वह उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाता है। मानों भरी सभा मे भी यह बताना चाहती थी कि भरत के मन में राज्य के प्रति कोई रुचि नहीं है। किन्तु समाज की स्वस्थता के हित में उनके द्वारा राज्य की स्वीकृति परमावश्यक है। वे श्री भरत को पहले भी धैर्य धारण करने का उपदेश दे चुकी थी।

जब सारा समाज कैकेयी की कटुतम शब्दों में भर्त्सना कर रहा था तब भी मां के द्वारा उनके विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा गया और आज भी वे अपनी महिमा में स्थित रहकर भरत को सिंहासनासीन होने का आदेश देती हैं।

इस प्रसंग में रामभद्र और उनके स्वभाव का सहज साम्य देखा जा सकता है। वन में कैकेयी अम्बा से मिलन होने पर उन्हें सांत्वना देने के लिए प्रभु ने काल, कर्म और गुण के माथे पर सारा दोष मढ़ दिया था।

कथा / प्रसंग

मौत का ठिकाना

मौत का ठिकाना

तीन चोरों ने जंगल में रहने वाले एक महात्माजी से पूछा कि, 'हम पेशे से चोर हैं, हम मौत के दर्शन करना चाहते हैं। आपने देखी हो तो हमें बताएं।' महात्माजी ने एक गुफा की ओर इशारा किया। चोर वहाँ गए और उसने देखा कि गुफा में सोना भरा पड़ा है। वे मौत की बात को भूल गए और सोने को घर ले जाने की योजना बनाने लगे। तय हुआ कि सोने को रात के समय घर ले जाना चाहिए। दिन में खा पीकर आराम कर लेना ठीक होगा।

एक चोर बजार से खाना लेने गया और दूसरा शराब लेने। जब तीनों चोर अलग अलग हुए तो प्रत्येक ने यह योजना बनाई कि शेष दो को मारकर सारा सोना वह अकेला ही हड़प ले। जो चोर गुफा में बैठा था, उसने सोने के टुकड़ों से दो पैनी छुरियाँ बनाई। पहला चोर खाना लेकर आया तो उसके पेट में एक छुरी भोंक दी और लाश पत्थरों के नीचे

दबा दी। दूसरा शराब लेकर आया तो उसके साथ भी ऐसा ही किया। अब गुफा में बैठकर तीसरे चोर ने खाना खाकर और शराब पीकर चलने की तैयारी की। जो चोर मर गए थे, वे खाने तथा शराब में जहर मिला लाये थे। जब तीसरे चोर ने खाना खाया और शराब पी तो थोड़ी देर के बाद वह भी मर गया।

जीवन को सुखी एवं स्वस्थ बनाने के लिए स्वार्थ, लालच तथा अनीति का त्याग करना चाहिए। अन्यथा हम स्वयं ही अपने लिए नरक का द्वार खोल देते हैं। लालच और स्वार्थ की भावना से युक्त मनुष्य समस्त वस्तुओं को बिना प्रयास पाना चाहता हैं और उसके माध्यम से वह अपनी ही मौत को बुलावा देता है।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Sri Ramcharitmanas Maas Parayan

आश्रम / मिशन समाचार

Holika Dahan Program

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Holika Dahan

आश्रम / मिशन समाचार

Holika Dahan

आश्रम / मिशन समाचार

Holika Dahan

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता

(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 7.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

गीता श्लोकपाठ

प्रति रविवार, सायं 4 बजे से

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

अध्याय - 17 (भक्ति योग)

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

आश्रम / मिशन समाचार

हनुमान चालीसा प्रवचन शृंखला

प्रतिदिन सायं 7 बजे से

on YouTube

हनुमान जयन्ति से आरम्भ

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

ओनलाईन सत्संग

प्रति शनिवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

आदि शंकराचार्य विरचित तत्त्वबोध

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

ओनलाईन सत्संग

प्रति रविवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

श्लोकपाठ / ध्यान / सत्संग

पूज्य स्वामिनी समतानन्दजी

Internet News

Talks on (by P. Guruji):

Video Pravachans on YouTube Channel

(☝ Click here)

Gita / Upanishad/ Prakaran Granthas

Sundarkand / Hanuman Chalisa

Shiv Mahimna Stotram / Chanting

Moral Stories etc

Audio Pravachans (☛ Click here)

Gita / Upanishad/ Prakaran Granthas

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh - Apr '25

Vedanta Piyush - Mar '25